विद्यार्थियों के सर्वांगीण विकास हेतु पाठ्य-सहगामी क्रियाओं की उपादेयता

रेनू रावत*

मनुष्य का चहुँमुखी विकास शिक्षा के द्वारा ही संभव है। शिक्षा उद्देश्यपूर्ण होनी चाहिए। शिक्षा का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य विद्यार्थियों के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास करना है। इसके विभिन्न पहलू हैं — शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, संवेगात्मक तथा आध्यात्मिक। यदि इनमें से किसी एक पहलू का विकास न किया गया तो बालक अपने भावी जीवन के अनेक क्षेत्रों में असफल हो जाएगा। विभिन्न शिक्षाशास्त्री एवं दर्शनशास्त्री सर्वांगीण विकास को शिक्षा का महत्वपूर्ण उद्देश्य मानते हैं। इन दर्शनशास्त्रियों एवं शिक्षाशास्त्रियों के अनुसार विद्यालयों में विद्यार्थियों के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास करने के लिए पाठ्यपुस्तकों के साथ-साथ पाठ्य-सहगामी क्रियाओं को भी उचित महत्व देना चाहिए। 'राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005' में बालक के सर्वांगीण विकास हेतु अत्यंत महत्वपूर्ण सुझाव प्रस्तुत किए गए हैं। 'राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा' में भी बी.एड. एवं डी.एल.एड. के पाठ्यक्रम में पाठ्य-सहगामी क्रियाओं के महत्व को समझते हुए इनकी समुचित व्यवस्था की गई है। प्रस्तुत लेख में विद्यार्थियों के व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास में पाठ्य-सहगामी क्रियाएँ कितनी सहयोगी हैं, इस पर विस्तृत चर्चा की गई है। विभिन्न शिक्षा आयोगों, समितियों, अनुच्छेदों में शिक्षा के साथ-साथ पाठ्य-सहगामी क्रियाओं को अत्यंत महत्वपूर्ण मानते हुए शिक्षकों को इन क्रियाओं का भली-भाँति संचालन करना आना चाहिए। क्योंकि व्यक्तित्व ही मनुष्य की पहचान है। अच्छे व्यक्तित्व का स्वामी जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सफलता प्राप्त करता है, जिससे समाज में उसकी छवि निखरती है। शिक्षकों को व्यक्तित्व के प्रत्येक पहलू की समझ होनी चाहिए, ताकि वे विद्यार्थियों के व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास में सहायक सिद्ध हो सकें।

शिक्षा बालक के अंदर छिपी शक्तियों का बाह्य प्रकटन करती है। बालक अपने पूर्व-ज्ञान के आधार पर नये ज्ञान के साथ अंतर्क्रिया करके सीखता है। शिक्षा के उद्देश्यों में महत्वपूर्ण उद्देश्य बालकों का सर्वांगीण विकास करना है। सर्वांगीण विकास का अर्थ है विद्यार्थियों का शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक, सामाजिक और आध्यात्मिक आदि विकास करना। बालकों का मनोसामाजिक, ज्ञानात्मक पक्ष एवं विभिन्न कलात्मक कौशलों का विकास करना ताकि बालक भविष्य में एक कौशलयुक्त सफल नागरिक बन सके तथा जीवन की समस्याओं को सुलझा कर सुखपूर्वक जीवनयापन कर सके। प्रसिद्ध शिक्षक एवं दार्शनिक जे. कृष्णमूर्ति भी विद्यार्थियों के समग्र विकास की बात करते हैं। उनके अनुसार व्यक्तित्व का पूर्ण एकीकरण ही समग्रता है। इसमें मनुष्य के कार्य, कथन और विचारों में एकता होती है। यह

* *सहायक आचार्य* (बी.एड. विभाग), मोतीराम बाबूराम पोस्ट ग्रेजुएट कॉलेज, हल्द्वानी, उत्तराखंड –263139

समग्रता तब तक नहीं हो सकेगी, जब तक बालक सामाजिक रूप से विकसित नहीं होंगे। विद्यालयों में विषयों के शिक्षण द्वारा विद्यार्थियों के ज्ञानात्मक अर्थात् बौद्धिक पक्ष का विकास तो होता है, परंतु सामाजिक, संवेगात्मक, शारीरिक आदि पक्ष उपेक्षित ही रहते हैं। यदि विद्यार्थियों के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास करना है तो विद्यालयों में शैक्षिक विषयों के साथ-साथ पाठ्य-सहगामी क्रियाकलापों का भी समय-समय पर नियमित एवं अनिवार्य रूप से आयोजन करना होगा। विद्यालय समय-सारणी में पाठ्य-सहगामी क्रियाओं का एक निश्चित कालांश प्रत्येक कक्षा के लिए निर्धारित होना चाहिए। ये क्रियाएँ विद्यार्थियों को एक अच्छे नागरिक बनने के लिए प्रशिक्षित करती हैं। इन गतिविधियों में भाग लेकर विद्यार्थियों में आत्मविश्वास, आत्मनिर्भरता, आत्माभिव्यक्ति एवं नेतृत्व जैसे महत्वपूर्ण गुणों का विकास होता है। खेलों के माध्यम से विद्यार्थियों का शारीरिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक आदि विकास होता है।

शिक्षा द्वारा व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास हेतु शिक्षण के उद्देश्यों को बैंजामिन बी.एस. ब्लूम ने तीन भागों में बाँटा—ज्ञानात्मक पक्ष, भावात्मक पक्ष एवं क्रियात्मक पक्ष। इनको पुनः छह-छह शिक्षण उद्देश्यों में वर्गीकृत किया गया जो व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओं को प्राप्त करने में अत्यंत सहयोगी हैं। महात्मा गाँधी भी शिक्षा के वैयक्तिक ध्येयों में चरित्र-निर्माण एवं सर्वांगीण विकास को महत्व देते हैं। सर्वांगीण विकास के लिए गाँधीजी बालकों के एकांगी विकास को दोषपूर्ण मानते हैं। उनके अनुसार, शिक्षा द्वारा बालकों के मस्तिष्क, हृदय एवं हाथों का संतुलित विकास होना चाहिए। ये क्रमशः ज्ञानात्मक, भावात्मक, संवेगात्मक एवं क्रियात्मक पक्षों के विकास को इंगित करते हैं। इनके उचित सामंजस्य से ही मनुष्य के व्यक्तित्व का विकास होता है। स्वामी विवेकानंद के *नव्य वेदांत* में शिक्षा का उद्देश्य मनुष्य में अंतर्निहित पूर्णता की अभिव्यक्ति है, यह पूर्णता मनुष्य में स्वतः विद्यमान रहती है और शिक्षा द्वारा इसका अनावरण मात्र किया जाता है। शिक्षा के उद्देश्य की प्राप्ति के लिए उन्होंने शारीरिक पूर्णता या शारीरिक स्वास्थ्य को प्रथम व आधारभूत उद्देश्य माना है।

स्वामी जी के अनुसार, यदि तुम्हारा शरीर स्वस्थ है, अपने पैरों पर दृढ़तापूर्वक खड़ा हो सकता है, यदि तुम अपने भीतर मानवशक्ति का अनुभव कर सकते हो, तो तुम उपनिषदों और आत्मा की महत्ता को अधिक अच्छी प्रकार समझ सकते हो अर्थात् वे शारीरिक विकास को अत्यंत महत्व देते हैं, जो बालकों के व्यक्तित्व निर्माण का अत्यंत आवश्यक पक्ष है। स्वामी विवेकानन्द के इस उद्देश्य 'अंतर्निहित पूर्णता' की प्राप्ति के लिए शारीरिक पूर्णता के साथ-साथ जीवन संघर्ष की तैयारी (जिसके लिए तकनीकी व विज्ञान की शिक्षा आवश्यक है) राष्ट्रीयता व अंतर्राष्ट्रीयता का विकास (*नव्य वेदांत* के अनुसार संपूर्ण मानवता में एकत्व विद्यमान) एवं चरित्र विकास (नैतिक विकास) आवश्यक है। टैगोर ने भी विश्व भारती के आदर्शों में शिक्षा के उद्देश्य के रूप में मानव की समग्रता का विकास करना अत्यंत महत्वपूर्ण बताया है, जिसके अंतर्गत बौद्धिक विकास के साथ-साथ इंद्रियों को संवेदनशील बनाना, भावनाओं का परिष्कार करना तथा नैतिक विकास करना अंतर्निहित है। ये सभी व्यक्तित्व के सर्वांगीण

विकास के तत्व हैं। श्री अरविन्द के अनुसार, शिक्षा का उद्देश्य विद्यार्थियों के शरीर, मस्तिष्क तथा आत्मा का सर्वांगीण विकास करना है। शिक्षा का उद्देश्य विद्यार्थियों को स्वयं का समग्र रूप से विकास करने में सहायता देना है। श्री अरविन्द शिक्षा के लक्ष्यों में सामाजिक पक्ष को भी अत्यंत महत्वपूर्ण मानते हैं। उनके अनुसार शिक्षा का लक्ष्य ऐसे सर्वांगपूर्ण मनुष्य का सृजन करना है, जो केवल व्यक्ति के रूप में ही नहीं, अपितु समाज के सदस्य के रूप में भी विकसित होता है।

प्रकृतिवादी शिक्षा के उद्देश्यों में हरबर्ट स्पेंसर ने जीवन का उद्देश्य इस जगत् में सुखपूर्वक रहना बताया है, जिसे उन्होंने समग्र जीवन कहा है। समग्र जीवन का विश्लेषण वह जीवन की पाँच प्रमुख क्रियाओं के द्वारा करते हैं— 1. आत्मरक्षा; 2. जीवन की भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति; 3. सन्ततिपालन; 4. सामाजिक व राजनैतिक संबंधों का निर्वाह; और 5. अवकाश का सदुपयोग। इस प्रकार मनुष्य समग्र जीवन सुखपूर्वक तभी व्यतीत कर सकता है, जब उसका व्यक्तित्व समग्र रूप से विकसित होगा।

आदर्शवादी शिक्षा के उद्देश्यों के अंतर्गत हार्न ने स्पेंसर के समान ही ध्येयों का एक उत्क्रम प्रस्तुत किया है जिसमें आत्मानुभूति के उत्तरोत्तर सोपान परिभाषित किए गए हैं।

आदर्शवादी शिक्षा के उद्देश्यों में जीवन का सर्वोत्तम लक्ष्य व्यक्तित्व का उच्चतम विकास अथवा स्वानुभूति है। दूसरे शब्दों में, व्यक्तित्व में निहित शक्तियों का पूर्ण विकास करना है अर्थात् व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास।

अर्थ क्रियावादी/प्रयोजनवादी भी वैयक्तिक विकास के साथ-साथ सामाजिक कुशलता का विकास, लोकतांत्रिक आदर्शों का विकास एवं प्रभावशाली ढंग से अनुभवों की रचना एवं पुनर्रचना करने की क्षमता का विकास जैसे उद्देश्यों का प्रतिपादन करते हैं।

यथार्थवादी रौस एल. फिने के अनुसार, शिक्षा का उद्देश्य व्यक्तियों का इस प्रकार निर्माण करना है कि वे सामाजिक संस्थाओं में अपना दायित्व निभा सकें। ये सामाजिक संस्थाएँ हैं—परिवार, उद्योग, स्वास्थ्य संरक्षण, राज्य आदि।

विभिन्न शिक्षाशास्त्रियों, दार्शनिकों एवं विचारधाराओं के अनुसार शिक्षा का महत्वपूर्ण उद्देश्य व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास करना है। अब प्रश्न ये उठता है कि क्या हमारे विद्यालयों में विद्यार्थियों के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास हो रहा है या नहीं? व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओं में सर्वप्रथम है शारीरिक विकास। हमारे विद्यालयों में शारीरिक विकास हेतु क्या किया जा रहा है? अरस्तु ने कहा है, "स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मस्तिष्क निवास करता है", तो क्या विद्यालयों में

प्रथम सोपान	शारीरिक स्वास्थ्य	निम्नतम, परंतु आगे के ध्येयों के आधार रूप में
द्वितीय सोपान	आर्थिक स्वतंत्रता	कौशल युक्त, जैसे— वैयक्तिक चरित्र एवं सामाजिक न्याय
तृतीय सोपान	ज्ञान	चिंतन
चतुर्थ सोपान	सौंदर्य की सराहना	कलात्मक कृतियों का सृजन
पंचम सोपान	चरित्र निर्माण	नैतिक आचरण का विकास, सामाजिक न्याय
षष्ठ सोपान	उपासना	मनुष्य का विश्वात्मा के साथ चेतन संबंध

स्वस्थ शरीर युक्त स्वस्थ मस्तिष्क विकसित हो रहे हैं? *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005* में विद्यार्थियों के सर्वांगीण विकास हेतु बहुत-सी बातें कही गई हैं, जो पाठ्यचर्या निर्माण के पाँच सिद्धांतों के रूप में हैं—

1. ज्ञान को विद्यालय से बाहरी जीवन से जोड़ा जाए।
2. पढ़ाई को रटंत प्रणाली से मुक्त किया जाए।
3. पाठ्यचर्या पुस्तक-केंद्रित न रह जाए।
4. कक्षा-कक्ष को गतिविधियों से जोड़ा जाए।
5. राष्ट्रीय मूल्यों के प्रति आस्थावान विद्यार्थी तैयार हों।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 के पाठ्यचर्या निर्माण के ये पाँचों सिद्धांत सर्वांगीण विकास हेतु बनाए गए हैं। प्रथम सिद्धांत के अनुसार, ज्ञान को बाहरी जीवन से जोड़ने का तात्पर्य यह है कि जो भी ज्ञान विद्यार्थियों को दिया जाए, वह उनके दैनिक जीवन से एवं अनुभवों से जोड़कर दिया जाए तथा जो रोचक होने के साथ-साथ जीवनोपयोगी हो एवं बोझिल न हो। इसमें विद्यार्थी अपने आस-पास की वस्तुओं के साथ अंतर्क्रिया करेगा और प्रत्यक्ष प्रमाण के साथ नया ज्ञान खोजेगा, जो भी अधिगम अनुभव उसे मिलेंगे, वे स्वप्रमाणित एवं स्वानुभव से मिलेंगे। सीखना आनंददायक होना चाहिए। विद्यार्थियों को लगे कि उनको सुना जा रहा है तथा उनकी अपनी पहचान है। विद्यालय विद्यार्थियों के लिए संतोषजनक स्थान होना चाहिए, जहाँ उनका पाठ्यक्रम के माध्यम से संपूर्ण रूप से विकास हो। किशोरावस्था एक महत्वपूर्ण अवस्था है। इस हेतु पाठ्यक्रम को विद्यार्थियों के सामाजिक और भावनात्मक स्तर पर सहयोगी होना चाहिए।

द्वितीय सिद्धांत है, पढ़ाई को रटंत प्रणाली से मुक्त किया जाए। पाठ्यक्रम को निर्माणात्मक/रचनात्मक शिक्षण के द्वारा पढ़ाया जाना चाहिए। प्राथमिक, उच्च प्राथमिक एवं माध्यमिक स्तर पर विद्यार्थियों को तार्किक चिंतन करने के लिए बढ़ावा देना चाहिए, जिससे विद्यार्थियों में भाषा का ज्ञान, प्रत्ययों की समझ, खोज की प्रवृत्ति विकसित हो सके। बाल्यावस्था में बालकों का मस्तिष्क उतना विकसित नहीं होता है, इसलिए शैशवावस्था से बाल्यावस्था तक बालक कुछ भी रट लेते हैं, जैसे—कविताएँ, गाने, कहानी आदि, लेकिन उच्च बाल्यावस्था एवं किशोरावस्था के बालकों को रटंत प्रणाली से मुक्त किया जाना चाहिए। यहाँ बालकों के मस्तिष्क में सोचने, समझने, चिंतन करने की क्षमताओं का विकास होता है। अतः बालकों के रटने पर बल न देकर आगमन, प्रदर्शन, प्रयोग एवं व्याख्या विधियों से पढ़ाया जाना चाहिए, जिसमें बालक स्वयं सीखने में चेतन रूप से सम्मिलित होते हैं और कार्य करके सीखते हैं। इस तरह के शिक्षण-अधिगम में विद्यार्थी ज्ञान को स्थायी रूप से ग्रहण करते हैं तथा समय-समय पर उस सीखे ज्ञान को स्थानांतरित करके उपयोग में लाते हैं। रटंत प्रणाली में ऐसा संभव नहीं है।

तृतीय सिद्धांत है, पाठ्यचर्या पुस्तक-केंद्रित न हो। इसका तात्पर्य है पुस्तकीय पाठ्यचर्या या पाठ्य-वस्तु विद्यार्थियों में नीरसता पैदा करती है। इसलिए पाठ्य-वस्तु को दैनिक जीवन के अनुभवों से जोड़ा जाना चाहिए। पाठ्यचर्या पुस्तक-केंद्रित हो तो बालक रटने पर ज़ोर देते हैं ताकि परीक्षा में अंक अच्छे ला सकें। सीखना तनावरहित होना चाहिए। सीखने को एक आनंददायक अनुभव की तरह होना

चाहिए। विद्यार्थियों को योग, खेल, उचित शारीरिक व्यायाम, उचित पोषण एवं उनकी मनोसामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति होनी चाहिए और समस्त गतिविधियाँ वास्तविक जीवन से संबंधित होनी चाहिए, जिससे उनमें गहन समझ पैदा हो।

चतुर्थ सिद्धांत है, कक्षा में गतिविधियों को बढ़ावा दिया जाए यानि पाठ्यक्रम के सैद्धांतिक पक्ष को गतिविधियों के माध्यम से रोचक बनाया जाए और प्रत्येक विद्यार्थी उन गतिविधियों में अपनी सहभागिता को प्रदर्शित करे तथा अधिगम में सक्रिय रूप से भाग ले। यह एक तरह से रचनावादी या निर्माणवादी (कंस्ट्रक्टिविज़्म) विधि की तरह है जिसमें विद्यार्थी स्वयं के पूर्व-ज्ञान के साथ नये ज्ञान का निर्माण करते हैं।

पंचम सिद्धांत के अनुसार, विद्यार्थियों के हृदय में राष्ट्रभक्ति की भावना का संचार करना है। विद्यार्थी अपने राष्ट्र का सम्मान करें। राष्ट्रीय संपत्ति को नुकसान ना पहुँचाएँ एवं अपने राष्ट्र के प्रति गौरव की अनुभूति उत्पन्न कर सकें।

भारत में 6–14 वर्ष की आयु के प्रत्येक बच्चे को निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा देने हेतु 'शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009' बनाया गया तथा 1 अप्रैल, 2010 को इसे पूरे देश में लागू किया गया। इसके नियमों में से कुछ नियम हैं— विद्यालयों में शिक्षक-विद्यार्थी अनुपात 1:30 होना चाहिए तथा प्रत्येक कक्षा एवं शिक्षक हेतु अलग कक्ष की व्यवस्था हो। किसी भी कक्षा में विद्यार्थियों को अनुत्तीर्ण नहीं किया जाएगा। किसी भी बच्चे को मानसिक यातना या दण्ड नहीं दिया जाएगा। दिव्यांग बच्चे भी मुख्यधारा के नियमित विद्यालय से शिक्षा प्राप्त कर सकेंगे। प्राथमिक स्तर पर एक किलोमीटर, माध्यमिक स्तर पर तीन किलोमीटर के दायरे में विद्यालय होंगे। इस अधिनियम में निर्धन विद्यार्थियों को निजी विद्यालयों में प्रवेश देने की बात कही गई है, जिसके तहत निजी विद्यालयों में 25 फ़ीसदी स्थान निर्धन परिवार के बच्चों के लिए सुरक्षित किए गए हैं, जिसके लिए सरकार आर्थिक सहायता देगी।

इस प्रकार 'शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009' को मौलिक अधिकार के रूप में अनुच्छेद 21ए में जोड़ा गया। इसमें सभी बच्चों को निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा देने हेतु सभी वर्ग, धर्म, जाति के बच्चों को रखा गया। सभी के सर्वांगीण विकास हेतु कई नियम बनाए गए। सभी को समान शिक्षा देने का लक्ष्य रखा गया। यद्यपि इस अधिनियम में निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा पर ज़ोर दिया गया, परंतु इसके पश्चात् शिक्षा की गुणवत्ता में कमी आई।

राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद् (एन.सी.टी.ई.) विनियम, 2014 के द्वारा प्रारंभिक शिक्षा में डिप्लोमा (डी.एल.एड.) कोर्स के लिए एक ऐसी विस्तृत एवं व्यावहारिक पाठ्यचर्या के निर्माण हेतु सुझाव दिए गए हैं, जो विद्यार्थियों के सर्वांगीण विकास हेतु अत्यधिक महत्व रखते हैं। इसमें सैद्धांतिक विषयों के साथ प्रयोगात्मक कार्य एवं स्थान संबद्ध प्रशिक्षण (इंटर्नशिप) हेतु द्विवर्षीय पाठ्यचर्या का निर्धारण किया गया है। इसी तरह राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद् विनियम, 2014 ने शिक्षाशास्त्र में स्नातक (बी.एड.) उपाधि हेतु भी द्विवर्षीय पाठ्यक्रम निर्धारित किया है। जिसमें सैद्धांतिक विषयों के साथ-साथ प्रायोगिक क्रियाकलाप एवं स्थान संबद्ध प्रशिक्षण (इंटर्नशिप) हेतु विस्तृत पाठ्यचर्या दी गई

है, जो प्रशिक्षणार्थियों को कौशलयुक्त शिक्षक के रूप में तैयार करेगी। एन.सी.टी.ई. ने डी.एल.एड. एवं बी.एड. पाठ्यक्रम हेतु पाठ्य-सहगामी क्रियाओं का भण्डार दिया है जो प्राथमिक, उच्च प्राथमिक, माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक कक्षाओं में शिक्षण के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। इन पाठ्य-सहगामी क्रियाओं के उपयोग से विद्यार्थियों का समग्र विकास संभव हो सकता है।

यदि विद्यार्थियों के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास करना है तो हमें अपने शिक्षकों को कौशलयुक्त प्रशिक्षण देना होगा। शिक्षक शिक्षा महाविद्यालयों में सेवा-पूर्व व सेवारत अध्यापकों हेतु नवाचार कार्यक्रम आयोजित किए जाने चाहिए। शिक्षकों को कंप्यूटर का प्रशिक्षण, पाठ्य-सहगामी क्रियाओं का प्रबंधन, खेलों का प्रशिक्षण इस तरह से कराया जाए कि वे अपने विद्यालयों में जाकर विद्यार्थियों के व्यक्तित्व को निखार सकें। विभिन्न पाठ्य-सहगामी क्रियाकलापों को पाठ्यक्रम से जोड़ा जाना चाहिए, जैसे—शारीरिक विकास हेतु खेल-कूद, व्यायाम आदि। सामाजिक विकास हेतु समाज कल्याण संबंधी क्रियाएँ, जैसे—श्रमदान, स्वच्छता अभियान, स्काउटिंग-गाइडिंग/रोवर-रेंजर, समाज सेवा क्लब इत्यादि। नागरिकता का विकास, नेतृत्व क्षमता विकास, नैतिक गुणों के विकास हेतु पाठ्यक्रम बनाया जाना चाहिए।

किशोरों की आवश्यकताओं को समझने हेतु शिक्षक शिक्षा में शिक्षा-मनोविज्ञान जैसे विषयों को बी.एड. में लागू किया गया है। परंतु वास्तविक धरातल में भी इसे उतारा जाना चाहिए, इसके लिए कक्षा विशेष को टोलियों में बाँटकर उनकी रुचियों, क्षमताओं व आयु के अनुसार उन्हें कार्य सौंपने की कला शिक्षक शिक्षा के प्रशिक्षण के दौरान सिखाई जानी चाहिए। विद्यार्थियों की मनोदशा भाँपकर उन्हें अभिप्रेरित करने का प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए। शिक्षक शिक्षा महाविद्यालयों में विद्यार्थी-शिक्षकों को सिखाया जाना चाहिए कि उन्हें विद्यार्थियों के साथ प्रेम, स्नेह, सहानुभूति, सहिष्णुता का प्रदर्शन करना चाहिए ताकि वे शिक्षक बनकर विद्यार्थियों के विश्वासपात्र बन जाएँ और सहजता से उनकी समस्याओं से अवगत हो सकें और वे विद्यार्थियों के मस्तिष्क में चल रहे द्वंद्व, कुण्ठा, हीनभावना और निराशा का पता लगा सकें तथा विद्यार्थियों के साथ सहानुभूतिपूर्वक व्यवहार करके उनके व्यवहारों में वांछित परिवर्तन ला सकें और विद्यार्थियों के व्यक्तित्व विकास में सहायक बन सकें।

आज के विद्यालयों में विद्यार्थियों के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास पूर्ण रूप से नहीं हो पा रहा है। इसके बहुत से कारण हैं—प्रथम कारण तो यह है कि विद्यालयों में शिक्षकों की कमी है। प्राथमिक स्तर पर कई विद्यालयों में एक ही शिक्षक है, कहीं-कहीं पर दो शिक्षक हैं। माध्यमिक स्तर पर भी दो या तीन शिक्षकों के सहारे विद्यालय संचालित हो रहे हैं। कहीं-कहीं पर विज्ञान, गणित, अंग्रेज़ी जैसे महत्वपूर्ण विषयों के अध्यापक/अध्यापिकाएँ ही नहीं हैं। दूसरा कारण शारीरिक/खेल/योग शिक्षा हेतु कोई शिक्षक अलग से नियुक्त नहीं है तथा शारीरिक शिक्षा के लिए कोई कालांश निर्धारित नहीं है तो शारीरिक विकास की बात बेमानी रह जाती है। सामाजिक विकास भी इन्हीं सहगामी क्रियाओं के द्वारा होता है, क्योंकि विद्यार्थी खेलों के माध्यम से सहयोग, सहनशीलता, हार-जीत, दया भाव, एकता, आत्मविश्वास जैसे मूल्यों को आत्मसात् करते हैं, जो

व्यक्तित्व विकास के अहम पक्ष हैं। परंतु विद्यालयों में पाठ्य-सहगामी क्रियाओं पर बहुत ही कम ध्यान दिया जाता है। जितना भी समय मिलता है, उसमें विद्यार्थी किताबी ज्ञान सीखने में लगे रहते हैं। शिक्षकों की कमी के चलते कभी-कभी बौद्धिक/मानसिक विकास में भी बाधा पहुँचती है। यद्यपि विद्यालयों में राष्ट्रीय पर्व, महत्वपूर्ण दिवस, सांस्कृतिक कार्यक्रम मनाए जाते हैं जिससे विद्यार्थियों को प्रेरणा मिलती है तथा राष्ट्र के प्रति गौरव की अनुभूति होती है। कहीं-ना-कहीं राष्ट्रीयता की भावना विद्यालयों में आंशिक रूप से पूर्ण हो ही जाती है।

हमारे विद्यालयों में विद्यार्थियों के नैतिक आचरण एवं मूल्यों में भी भारी गिरावट देखने को मिल रही है। इसके भी कई कारण हैं। सबसे पहला कारण तो हमारे समाज में परिवारों का एकल होना है, जहाँ बच्चे अपने माता-पिता तक ही सीमित रह गए हैं, उन्हें मार्गदर्शन और प्रेमभाव प्रदर्शित करने के लिए परिवार में बुजुर्ग नहीं हैं। दूसरा कारण विद्यालयों में नैतिक शिक्षा एवं जीवन मूल्यों से संबंधित शिक्षा भी उचित प्रकार से नहीं दी जा रही है। पाठ्य-सहगामी क्रियाकलापों के माध्यम से विद्यार्थियों में नैतिकता, सामाजिकता, कार्यकुशलता, सामाजिक न्याय जैसे महत्वपूर्ण तथ्यों से परिचित कराया जा सकता है। परंतु समयाभाव एवं सृजनशील शिक्षकों की कमी के चलते पाठ्य-सहगामी क्रियाएँ उचित रूप से संचालित नहीं हो पा रही हैं। साथ ही, देश के लिए बलिदान देने वाले स्वतंत्रता सेनानियों, सेना के वीरों तथा महापुरुषों की जीवनगाथाएँ भी पाठ्यक्रम में सम्मिलित नहीं की गई हैं, जो विद्यार्थियों के अंदर देश के प्रति गौरव, प्रेमभाव और प्रेरणा जैसे गुणों को जाग्रत करती हैं।

यदि हमारा ध्येय शिक्षा द्वारा विद्यार्थियों के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास करना है तो हमें अपने विद्यालयों में शिक्षक-विद्यार्थी अनुपात शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 के अनुसार रखना होगा तथा सभी विषयों के अध्यापकों की व्यवस्था करनी होगी। अध्यापकों को समय-समय पर शिक्षण के क्षेत्र में हो रहे नवाचारों से अवगत कराना होगा। शिक्षण उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए सृजनशील, रचनावादी अध्यापकों को वरीयता देनी होगी। शिक्षक-प्रशिक्षण चाहे सेवा-पूर्व हो या सेवारत, दोनों को इस प्रकार प्रशिक्षित करना होगा कि वे शिक्षा के उद्देश्यों को प्राप्त करने में विद्यार्थियों की भरपूर सहायता कर सकें। प्रशिक्षणरत शिक्षकों को विषयों के साथ-साथ पाठ्य-सहगामी क्रियाकलापों को संचालित करने, उनका प्रबंधन करने का प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए, क्योंकि व्यक्तित्व के विकास में शैक्षिक विषयों के साथ-साथ पाठ्य-सहगामी क्रियाओं का भी बहुत योगदान रहता है। पहले पाठ्य-सहगामी क्रियाओं को अतिरिक्त कहा जाता था, क्योंकि तब विषयों पर अधिक ज़ोर दिया जाता था। लेकिन अब इन्हें पाठ्य-सहगामी क्रियाएँ कहा जाता है। राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद् विनियम, 2014 में इन पाठ्य-सहगामी क्रियाओं को अधिक महत्व दिया गया है। अतः विद्यार्थियों के व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास हेतु पाठ्य-सहगामी क्रियाओं को विषयों के साथ-साथ अनिवार्य रूप से संचालित किया जाना चाहिए।

संदर्भ

अरबिंदो. 1946. *ए सिस्टम ऑफ़ नेशनल एजुकेशन*. आर्या पब्लिशिंग हाउस, कलकत्ता.

ओड़, एल. के. 2006. *शिक्षा की दार्शनिक पृष्ठभूमि*. राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी.

गाँधी, एम. के. 1951. *बेसिक एजुकेशन*. नवजीवन पब्लिकेशन हाउस, अहमदाबाद.

———. 2011. टू स्टूडेंट्स. सर्व देव संघ, वाराणसी.

जे. कृष्णमूर्ति. 2010. *संस्कृति का प्रश्न*. कृष्णमूर्ति फ़ाउंडेशन इंडिया, वाराणसी.

टैगोर, आर. एन. 2000. *साधना*. मैक-मिलन एंड कॉ.

होर्न, एच.एच. 1930. द *फ़िलोसफ़ी ऑफ़ एजुकेशन*. दि मैक-मिलन, न्यूयॉर्क.

राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद्. 2014. *रिकोग्निशन नॉर्मस एंड प्रोसिजर्स—रेग्युलेशन 2014*. एन.सी.टी.ई., नयी दिल्ली.

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्. 2006. *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005*. रा.शै.अ.प्र.प., नयी दिल्ली.